बदलता परिवेश साहित्य और मीडिया

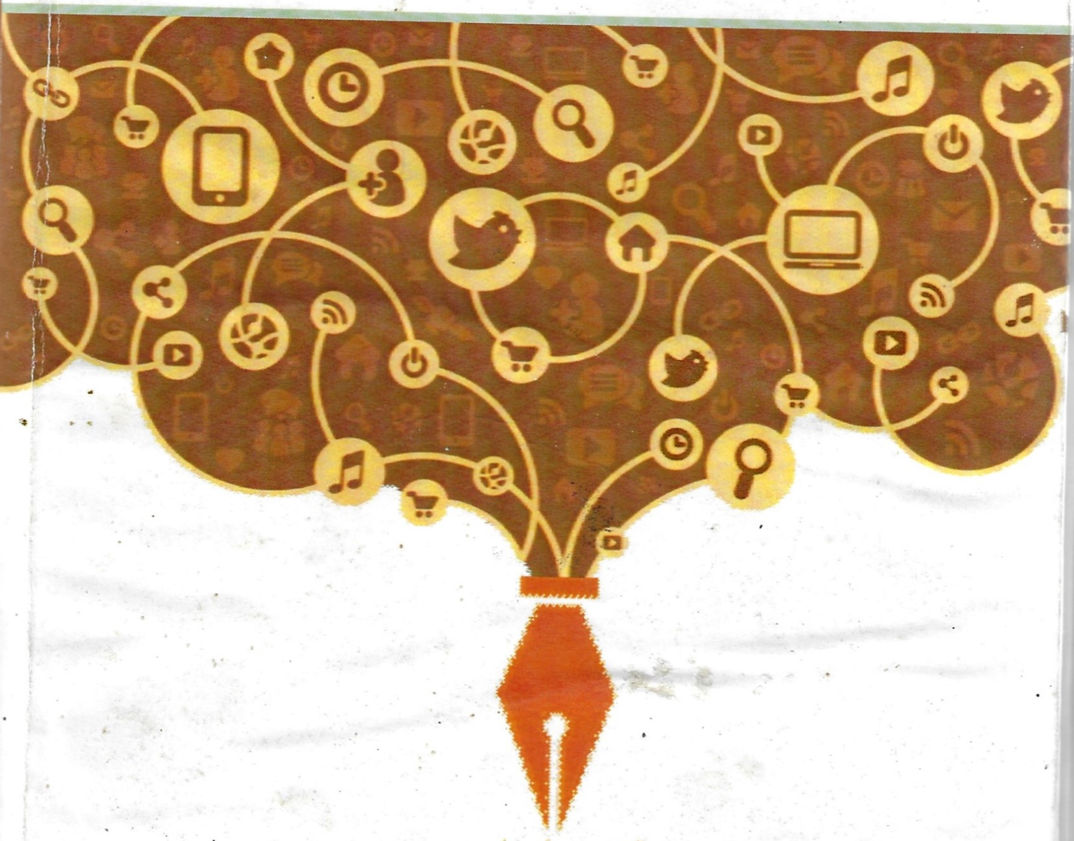

मिराण्डा हाउस, हिन्दी विभाग

बिक्रम सिंह की कहानियों में उत्तर आधुनिक संदर्भ और दलित विमर्श 117
— *डॉ. संगीता वर्मा*
दलित जीवन का यथार्थ और भूमि समस्या 131
— *अतुल कुमार*
दलित स्त्री विमर्श : अवधारणा और आवश्यकता 136
— *डॉ. सुषमा कुमारी*
समकालीन हिंदी ग़ज़ल में दलित अस्मिता 141
— *जुगुल किशोर चौधरी*
स्त्री के स्वप्न, संसार और यातना : रंजना जायसवाल की कविताएँ 156
— *डॉ. नीतू परिहार*
संस्कृत साहित्य में स्त्री छवि 165
— *विवेक मिश्रा*
शिक्षा, मुसलमान औरतें और उनके लेखन का अध्ययन 176
— *रिजवाना फातिमा*
'कितने पाकिस्तान' में अभिव्यक्त मानवीय संवेदना 188
— *फरीदा खातुन*
मोहन राकेश की कहानियाँ : परम्परा एवं आधुनिकता 193
— *साहिद*
शिवप्रसाद सिंह की कहानियों में ग्रामीण जीवन 200
— *डॉ. स्नेह लता नेगी*
फाँस : किसान जीवन का दस्तावेज 206
— *अभिषेक दांगी*
हिंदी साहित्य में किन्नर समाज 212
— *पूनम सिंह*
लघु कथा : बहुआयामी जीवन का विस्तार 217
— *डॉ. सुनीता सक्सैना*
आदिवासी साहित्य में स्त्री-अस्मिता का विमर्श 224
— *दीप्ति*

(बदलता परिवेश और मीडिया)

मीडिया के बदलते परिवेश में सामुदायिक रेडियो 233
— *डॉ. वर्तिका नन्दा*
मीडिया में दलित बनाम दलित मीडिया 239
— *डॉ. राम भरोसे*
मुम्बई की हिन्दी साहित्यिक पत्रिकाएँ 252
— *डॉ. मोहसिन खान*
ये मीडिया है 264
— *राकेश कुमार दुबे*
आज की पत्रकारिता स्वरूप और अपेक्षाएँ 278
— *कमलेश कुमार बैरागी*
हिन्दी और सोशल मीडिया 286
— *अमित कुमार*
हर मौत को चाहिए कफन, हर जिंदगी को आबरू 295
— *आशीष कुमार*
हिंदी समाचार-पत्र व हिंग्लिश 305
— *डॉ. शिखा कौशिक 'नूतन'*
प्रौद्योगिकी विकास के दौर में वेब दुनिया और साहित्य 311
— *सोनपाल सिंह*
हिन्दी सिनेमा में अभिव्यक्त थर्ड जेंडर की समस्याएँ 318
— *भारती*
एल.जी.बी.टी. समाज और कानूनी जंग एक अध्ययन 324
— *सविता शर्मा*
साहित्य और फिल्म में चित्रित किसान 329
— *दिनेश प्रताप सिंह पैकरा*
स्त्री प्रधान सिनेमा का बदलता स्वरूप 333
— *डॉ. चारू आर्या*
बीसवीं शताब्दी के हिंदी कथा साहित्य पर आधारित फिल्मों में स्त्री 340
— *प्रेम कुमार*

'कितने पाकिस्तान' में अभिव्यक्त मानवीय संवेदना

फरीदा खातुन

जिस चेतना में मानव-जाति के पार्थिव कल्याण को चरम लक्ष्य माना जाता है, वही मानववादी दर्शन कहलाता है। साहित्य अपनी अभिव्यक्ति और संप्रेषणीयता में मानवयीता की रक्षा करना चाहता है। मानवीय मूल्यों को सहेजे हुए साहित्य जिन प्रश्नों के साथ हमारे सामने आता है वे प्रश्न मूलत: जीवन से जुड़े होते हैं, उनका विषय भी जीवन होता है। इस दृष्टि से साहित्य जीवन मूल्यों की सहज अभिव्यक्ति है।

हिंदी के तमाम उपन्यासकारों की श्रेणी में युगचेतना उपन्यासकार कमलेश्वर का उपन्यास 'कितने पाकिस्तान' समकालीन उपन्यास जगत में 'मील का पत्थर' साबित हुआ है। कमलेश्वर का यह उपन्यास मानवता के दरवाजे पर इतिहास और समय की एक दस्तक है। इस रचना में लेखक इतिहास और भूगोल की सीमाओं को तोड़ने का प्रयास कर मनुष्य की वास्तविक समस्याओं एवं क्षमताओं को सामने रखने का सफल प्रयास किया है। लेखक ने इस उपन्यास की भूमिका में लिखा है--

"यह उपन्यास मन के भीतर चलने वाली एक जिरह का नतीजा है। मैं कहानियों और कॉलम लिखता रहा। नौकरियाँ करता और छोड़ता रहा। टी.वी. के लिए कश्मीर के आतंकवाद और अयोध्या की बाबरी मस्जिद पर दसियों फिल्में बनाता रहा।"[1]

इस उपन्यास में लेखक ने किसी विशेष व्यक्ति को नायक न बनाकर स्वयं समय को ही नायक के रूप में स्थापित किया है। अदीब की अदालत में उन सभी व्यक्तियों को पेश किया जाता है जिनसे अनेक विवादास्पद किस्से जुड़े जुए हैं और भारतीय इतिहास में पल रहे वह भ्रम ही नफरत रूपी पाकिस्तान की बुनियाद का कारण है। लेखक ने बड़े ही तार्किक एवं वैज्ञानिक ढंग से उन कारणों की खोज की

है जिसकी वजह से विभाजन के विष वृक्ष पनपे और आज भी निरीह लोग इस शोषण के शिकार हैं। कमलेश्वर की दृष्टि में ईश्वरत्व से ऊपर मनुष्यत्व है। देवदासी रुना के माध्यम से इसी मनुष्यत्व की प्रतिष्ठापना करते हुए वे लिखते हैं - "धरती के मनुष्य ने प्रेम और मित्रता के अलावा की वैध परंपरा का आविष्कार भी कर लिया है, इसीलिए उन्हें संस्कार जैसी महाशक्ति भी प्राप्त हो गई है। ...तुम्हारे पास केवल वासना है, प्रेम नहीं है। केवल वैयक्तिक श्रेष्ठता का द्वेष है इसलिए मित्रता नहीं है। तुमने स्त्री को मात्र भोग्या मान कर अवैध संतानों का देवलोग स्थापित कर लिया है, पर इस देवलोक के पास कोई संस्कार या परंपरा नहीं है।"[2]

कमलेश्वर ने इतिहास की गहराई में जाकर तथ्यात्मक सामग्री के आधार पर तटस्थता और निष्पक्ष रूप से बँटवारे की समस्या का हल ढूँढ़कर मानवता की कल्पना को साकार रूप प्रदान करने का प्रयास किया है। लेखक का मानना है कि धर्म मनुष्य को सच्चाई एवं मानवता की राह दिखाता है पर औरंगजेब और शिबली नुमानी जैसे कुछ लोग इस धर्म का प्रयोग अपने स्वार्थ के लिए करते हैं। "ये लोग अपने स्वार्थों के लिए सब मजहब को मानते थे, लेकिन मजहब की बात कोई नही मानता।"[3]

दाराशिकोह हिंदुस्तान की समन्वयवादी संस्कृति का पोषक था लेकिन दिल्ली का ताजोतख्त हथियाने के इरादे से औरंगजेब ने उसके खिलाफ कठमुल्लों से मिलकर साजिश की और उसका सिर कटवा डाला। दिल्ली की जनता दाराशिकोह को पसंद करती थी और उसके लिए अपनी जान तक दे सकती थी। लेकिन औरंगजेब ने अपनी कुटनीति से इस गृह' युद्ध को धर्म का मुलम्मा चढ़ा नफरत के इस बीज को बो दिया। "दिल्ली के तख्त को पाने के लिए औरंगजेब ने धर्म को तलवार बनाया था। दाराशिकोह को मारने के बाद वह कुंठाग्रस्त हो गया था। उसकी इसी कुंठा का नतीजा था कि उसने भारत में रच-बस गए मुसलमानों को मानसिक रूप से विस्थापित बना दिया था। वही मानसिक विस्थापन लगभग दो सदियों के बाद विभाजन का कारण बना।"[4] महादेश का बँटवारा धर्म ने ही किया है। अगर इस धार्मिक कट्टरता को रोका नहीं गया तो न जाने कितने पाकिस्तान बनते रहेंगे जिनकी नींव मानवता की नृशंस हत्या पर रखी जाएगी।

उपन्यास के गहन-गंभीर विमर्शमूलक माहौल में भी सलमा-अदीबा, जेनब-बूटा सिंह, विद्या-लेखक की प्रेमकथा का प्रसंग चलता रहता है। ये प्रेम कथा महज वैयक्तिक प्रेम-कथा न होकर मानवीय संवेदना से ओत-प्रोत है। सलमा और

अदीब, जेनब-बूटा सिंह जैसे लोगों का प्रेम हिंदू-मुसलमान के बीच की दीवार को गिराता है। ये सभी पात्र सिर्फ इन्सान रह जाते हैं। सलमा कहती है --"अदीब आप हिंदू से मुसलमान और मैं मुसलमान से हिंदू हो जाऊँ --

"हाँ, तो अब कैसा लगा? एक मुसलमान के हाथ में हाथ देते हुए?

अदीब ने पूछा।

-- इसमें तो कोई मजहब आड़े नहीं आया। यह तो उसी तरह मुझे कँपाता है, जब आप हिंदू थे।"[5]

उपन्यास में एकिंदु ओर गिलगमेश का कथा-प्रसंग भी इसी मानवता को जीवित रखने की संघर्ष कथा है। वह मानवता की औषधि की तलाश में सागरतल की गहराइयों में उतरता चला जाता है। लेखक का मानना है कि जब तक मनुष्य में एक-दूसरे के लिए संवेदना नहीं उपजेगी, तब तक वे एक-दूसरे के लिए खुँखार होते रहेंगे --

"जिस दिन इन्सानियत का दुख एकात्म हो जाएगा, उस दिन पूरी दुनिया के बाशिंदों का ईश्वर भी एक हो जाएगा और तब वह ईश्वर शिकायतों की अदालत का अमूर्त निर्णायक नहीं, वह मानवता के सुख का अंतिम केंद्र बन जाएगा।"[6]

लेखक आँसू के सूख जाने को संस्कृतियों का उजड़ जाना मानते हैं। दाराशिकोह अंधा कबीर और अश्रुबैध इसी आँसुओं को बचाने की बात करते हैं। "दारा ने बुदबुदा कर कहा -- मेरे पास और तो कुछ नहीं लेकिन कुछ आँसू अभी भी बाकी बचे हैं -- और यह उन हिंदुस्तानियों के लिए है जो मेरी तरह बदनसीब हैं -- लो इन आँसुओं को सँभालो और अगर तुम इन आँसुओं को सूखने न दिया तो किसी ओर दाराशिकोह को तुम फिर जन्म दे सकोगे।"[7]

अश्रुबैध भी मानवता के इसी सपने को साकार करने के लिए पहले आँसू फिर पसीना और अंत में खंडित सपनों को सहेज कर रखता चला जाता है। डॉ. रामचंद्र तिवारी के अनुसार, "कितने पाकिस्तान लेखक के दीर्घकालीन मंथन का परिणाम है। समय-इतिहास उसके नायक हैं। लेखक ने मानव सभ्यता के लंबे इतिहास की गहरी पड़ताल करते हुए अनुभव किया है कि -- इतिहास ने प्रत्येक कालखंड में नफरत और घृणा से इन्सान को दो फाँकों में बाँटा है।"[8]

इस उपन्यास में लेखकने जितने प्रश्न उठाए हैं वे केवल एक देश की सीमा तक नहीं हैं, वरन् उसका एक वैश्विक धरातल बनता है। लेखक ने बाजारवाद की बढ़ती हुई प्रतिष्ठा में लुप्त होती सहज मानवीय संवेदना पर तमाम निराशाओं और

कुंठाओं के बावजूद भी लेखक हताश नहीं होता। वह छोटे-छोटे प्रसंगों में भी मानवीय सहज सुलभ प्रेम की तलाश कर ही लेता है। उपन्यास में अदीब जब मीरबांकी के गाँव सनेहुआ पहुँचने से पहले फैजाबाद की सड़कों पर टहलता है। --

"मुसलमान औरतें बुरका पहने बाजारों में खरीद-फरोख्त कर रही थीं या चुड़ियाँ पहन रही थीं, हिंदू मनिहार उनकी नाजूक कलाइयों में चुड़ियाँ पहना रहे थे और वे बुर्के का पल्ला उठाए, खुले मुँह उनके सामने बैठी थीं। वे मनिहार उनके भाई, चाचा या मामा थे।"[9]

लेखक ने इस छोटे से प्रसंग के द्वारा यह दिखा दिया है कि भारतीय सह संस्कृति का विनाश होना संभव नहीं। बाबर से लेकर औरंगजेब तक जितने आक्रमणकारी रहे हैं, वे अंततः यहीं की मिट्टी में रच-बस गए। हमले के बाद हर हमलावर इस हिंदुस्तानी तहरीफ और तहजीब का हिस्सा बनता गया यहाँ तक कि सूफी धर्म परंपरा का भी भारतीयकरण हुआ --इस मुल्क के मिट्टी में वह ताकत और तासीर है कि यह सबको जज्ब कर लेती है।"[10]

पुष्पपाल सिंह ने इस उपन्यास पर विचार करते हुए लिखा है --"कमलेश्वर के इस उपन्यास के प्रकाश में आने से पूर्व मेरी यह धारणा रही कि कमलेश्वर की कहानी बहुत सशक्त और समृद्ध हैं किंतु उनका उपन्यास कमजोर है, शायद फिल्मी लेखन भी इसका एक कारण रहा हो, किंतु 'कितने पाकिस्तान' पर की गई मेहनत, इसकी अद्भुत बौद्धिक विमर्श क्षमता, इतिहास, अपने समय के चलते राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सवालों पर बेलाग सोच आदि ने न केवल इस उपन्यास को हिंदी की एक महनीय उपलब्धि बनाया।"[11]

अंततः यह कहा जा सकता है कि कमलेश्वर का यह उपन्यास मानवता के दरवाजे पर दी गई एक दस्तक है जिसकी परिकल्पना लेखक बोधिवृक्ष के रूप में करता है। और इसे रोपने का दायित्व आने वाली पीढ़ी को देता है। अंधा कबीर पोखरन जैसे परमाणु विस्फोटक केंद्र पर इसी बोधिवृक्ष को रोपना चाहता है जिसकी जड़ें नीलकंठ की तरह सारा विष पी ले और मरती हुई मानवीय संवेदना फिर से जीवित हो सके। लेखक ने अपने प्रशंसनीय ऐतिहासिक ज्ञान के फलस्वरूप भारत ही नहीं अपितु अन्य देशों में कराहती मानवता को भी संवेदनशीलता प्रदान की है। वह युद्ध की विभीषिकाओं में नहीं शांति के शंखनाद में विश्वास करता है।

संदर्भ सूची

1. कमलेश्वर, 'कितने पाकिस्तान' राजपाल एंड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली,

संस्करण : 2013, पृष्ठ संख्या -- 1
2. वही, पृष्ठ संख्या -- 23
3. वही, पृष्ठ संख्या -- 218
4. वही, पृष्ठ संख्या -- 260
5. वही, पृष्ठ संख्या -- 131
6. वही, पृष्ठ संख्या -- 226
7. वही, पृष्ठ संख्या -- 238
8. तिवारी रामचंद्र, 'हिंदी गद्य का इतिहास' लोकभारती प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृष्ठ संख्या -- 23
9. कमलेश्वर, 'कितने पाकिस्तान' राजपाल एंड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली, संस्करण : 2013, पृष्ठ संख्या -- 79
10. कमलेश्वर, 'कितने पाकिस्तान' राजपाल एंड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली, संस्करण : 2013, पृष्ठ संख्या -- 223
11. सिंह, पुष्पपाल, 'हिंदी गद्य - इधर की उपलब्धियाँ' वाणी प्रकाशन, 21ए, दरियागंज, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2004, पृष्ठ संख्या --21

शोध छात्रा
विश्वभारती शांतिनिकेतन

Anang Prakashan
978-93-80845-50-0
9 789380 845500
अनंग प्रकाशन
anangprakashan@gmail.com
09350563707, 09540176542